भारत विभाजन एवं जम्मू व कश्मीर का इतिहास

सीमा क्षेत्रों में सीजफायर के उल्लंघन और उससे जम्मू क्षेत्र की स्थानीय जनता एवं उसके जीवन, शांति व राष्ट्रीय शांति पर पड़ रहे प्रभाव का गहन अध्ययन/शोध करने से पहले समस्या के मूल/जड़ तक जाना अति आवश्यक है और उसके लिए इतिहास को जानना बहुत महत्वपूर्ण है। इतिहास ही हमें अपने अतीत को समझने व देखने की वह दृष्टि प्रदान करता है जिससे तत्काल वर्तमान को उसकी नींव पर खड़ा होने और उसकी वास्तविकता को समझने में हम समर्थ हो पाते हैं जिसके परिणामस्वरूप भविष्य को सँवारने व संभालने की नीति और कार्यविधि के व्यावहारिक पक्ष को तैयार कर सकते हैं। इतिहास के गर्भ में छिपे सत्य को समझने और प्रभावी तथ्यों की पहचान करके, समस्या और समस्या के निदान की रूपरेखा का चिंतन ही राष्ट्र की शांति और गौरवमयी संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन हेतु ठोस आधार प्रदान करता है।

भारत के विभाजन एवं जम्मू व कश्मीर के इतिहास का अध्ययन भी समस्या की दृष्टि और जम्मू व कश्मीर की प्राचीन काल से लेकर भारत के विभाजन के समय उसके साथ-साथ आधुनिक काल में जो है उसे समझने एवं समस्या के विषय में तर्क बनाने में बहुत महत्वपूर्ण है। 1947 ई० में द्विराष्ट्र के अति-घातक सिद्धांत (जिसका प्रतिपादन 1940 ई० में जिन्ना ने किया था) के हथियार से जब भारतवर्ष दो राष्ट्रों में विभाजित हुआ तब उस समय धर्म की राजनीति के आधार पर रखकर मुस्लिम राष्ट्र के रूप में पाकिस्तान और अन्य धर्मों (खासकर हिन्दुओं) के लिए भारत, जिससे आगे चलकर पाकिस्तान, भारतवर्ष से अलग होकर एक मुस्लिम राष्ट्र के रूप में उभरा और विभाजन के समय भारतवर्ष में "कुल रियासतों की संख्या 562 थी (रियासतों की संख्या के स्रोतों में फर्क है। ताराचंद व जॉन गुन्थर व अधिकतर ने 562 बताई है)"[1] जिनमे 1947 से पूर्व अविभाजित जम्मू व कश्मीर रियासत उस समय डोगरा शासकों के नेतृत्व में एक विशाल, सुख-संपन्नतापूर्ण बहुत ही सुंदर राज्य था जिसे कबायलियों व

[1] प्रियवंद. (2008). भारत विभाजन की अंत:कथा. पृ 458.

पाकिस्तानी सेना ने आक्रमण कर छिन्न-भिन्न करके रख दिया जो की आज भी हमारे सामने कुछ-कुछ उसके रूप में दिखता है और साथ ही आज भी किसी-न-किसी समस्या के रूप में हमारे समक्ष है जिसे हम सीमा विवाद के रूप में, युद्धों के रूप में या युद्ध के बाद, युद्ध-विराम की घोषणा/समझौते के उल्लंघन के रूप में देख सकते हैं और उक्त समस्याओं की जड़ कहीं-न-कहीं इतिहास या विभाजन को सही से समझने पर पाई जा सकती है।

1.1 जम्मू व कश्मीर का इतिहास, प्राचीन से आधुनिक काल तक :

प्राचीन कालीन इतिहास : जम्मू व कश्मीर राज्य का प्रारम्भ से ही स्वर्णिम इतिहास रहा हैं। जम्मू का नाम वहाँ के राजा 'जम्भू लोचन' के नाम से माना जाता है जो बाद में बदलते-बदलते जम्मू हो गया वहीं "कश्मीर का इतिहास कश्यप ऋषि से संबन्धित है जिससे कश्यप मीर (मेरु) का ही अपभ्रंश होता हुआ कश्मीर हो गया"[2] विश्वप्रसिद्ध राजतरंगिणी के महान लेखक कल्हण भी यहीं जन्मे और राजतरंगिणी जैसे महान ग्रंथ की रचना कर दुनिया को एक नई दृष्टि प्रदान की, कल्हण ने अपनी राजतरंगिणी में अर्जुन के प्रपोत्र और महाराजा परीक्षित के पुत्र हरनदेव को यहाँ का राजा बताया है। इसके बाद मौर्य काल में यह अपनी अद्भुत छटा को निखारता हुआ विश्वप्रसिद्ध हुआ, यहाँ हजारों भवन, सैंकड़ों विहार, स्तूपों का निर्माण हुआ और यहीं से बोद्ध धर्म का प्रचार-प्रसार अफ़ग़ानिस्तान, लद्दाख और तिब्बत तक जा पहुंचा। श्रीनगरी के नाम से राजधानी की स्थापना हुई जो कि बाद में महाराजा प्रवरसेन के नाम से पहले प्रवरपुर और उसके बाद श्रीनगरी फिर श्रीनगर के नाम से विख्यात हो गई। उसके बाद हूणों का राजा मिहिरकुल इस प्रांत के स्वेच्छाकारी शासक के रूप में रहा और हूणों के प्रबल अध्ण्ड ने इस प्रांत की व्यवस्था को तहस-नहस कर दिया। सम्राट विक्रमादित्य, चन्द्रगुप्त और समुन्द्रगुप्त ने शक और हूणों को पराजित करके उनका प्रभुत्व समाप्त कर दिया। विक्रमादित्य के प्रतिनिधि प्रतापादित्य और मातृगुप्त ने इस राज्य की

[2] गुप्त, विजय. (2008). खोया हुआ कश्मीर इतिहास के दर्पण में. पृ 32

व्यवस्था को सुंदर और गतिमान बनाया। "साहित्य और दर्शन एवं कलाओं के विकास की स्थली कश्मीर में शंकराचार्य के अद्वैत के स्थान पर शैव दर्शन का वहाँ के सामाजिक जीवन पर व्यापक प्रभाव रहा है। कश्मीर का शैव दर्शन प्रत्यभिज्ञावाद का समर्थक है, जो बोद्धों के शून्यवाद और शंकराचार्य के अद्वैतवाद से अधिक सरल, सहज और प्रेरणाग्राही है"[3]। इसी धरा पर विश्वप्रसिद्ध शारदापीठ की स्थापना हुई और जहां दूर-सुदूर प्रान्तों व अन्य देशों से भी विद्यार्थी यहाँ शिक्षा अर्जित करने आते थे। शारदापीठ अपने समय के तक्षशिला और नालंदा विद्यापीठों की तरह व्यापक लोकप्रिय था और शारदापीठ ने शिक्षा के प्रचार में अहम भूमिका निभाई।

मध्यकालीन इतिहास: जम्मू व कश्मीर के मध्यकालीन इतिहास में सामाजिक जीवन में शिक्षा, संस्कृति, कला का निरंतर संवर्धन होता रहा है परंतु मध्यकाल में इस प्रांत ने काफी उथल-पुथल का दौर देखा। तुर्क आक्रांता दुलचारखान जिसे जुल-कादर खान के नाम से भी जाना जाता है, ने 1320 ई॰ में कश्मीर में आकर व्यापक नरसंहार करके यहाँ के जनजीवन को अस्त-व्यस्त कर दिया उसके बाद सुल्तान जैन-उल आबदिन (1420-70 ई॰) जैसे योग्य शासक आए तब उन्होने इस प्रांत के जन जीवन को गति प्रदान की और वहाँ की कला व संस्कृति की गति को मंथर नहीं होने दिया। राजतरंगिणी और महाभारत जैसे आर्य ग्रन्थों का फारसी भाषा में सम्मानजनक अनुवाद किया गया और प्रारम्भ में जो सुल्तान शासक आए उनके प्रशासन एवं दरबार की भाषा संस्कृत ही रही "सुल्तान बादशाह बहा-उद-दीन के मजार पर आज भी संस्कृत भाषा में उसका परिचय अंकित है"[4] इन सुल्तानों का इतिहास एक स्वर्णिम दौर के रूप में आज भी वहाँ की जनता में स्मरणीय है इसके बाद वहाँ पर 1586 ई॰ तक राम-सउ-दीन व उसके वंशजों का शासन रहा। इसके बाद 1586 ई॰ में यहाँ मुग़ल शासन आया और मुग़लों ने इस प्रांत पर विजय प्राप्त करके अपने साम्राज्य में विलीन कर लिया। मुग़ल शासन काल को एक स्वर्णिम शासन के

---

[3] गुप्त, विजय. (2008). खोया हुआ कश्मीर इतिहास के दर्पण में. पृ 34.
[4] वही 34.

रूप में आज भी याद किया जाता है। मुग़लों ने इस प्रांत के सौन्दर्य को संवारा और निखारा, मुग़ल साम्राज्य में मुग़ल बादशाहों के कला प्रेम, और उसके कार्यों की प्रशंसा लगभग सभी इतिहासकारों ने की है। नूरजहां, जहाँगीर, शाहजहाँ तथा अन्य मुग़ल शासकों ने शालीमार, निशातबाग, चश्मेशाही और अन्य मनोहारी निर्माण के द्वारा जम्मू व कश्मीर की धरती को संवारा।

मुग़लों के बाद अहमद शाह दुरानी ने अफ़ग़ानिस्तान से चलकर जम्मू व कश्मीर पर विजय प्राप्त की और उसने इस धरती को बुरी तरह से रोंदा फिर वहाँ पठानों का शासन आया "पठान शासकों, सरदारों ने लगभग 60 वर्षों के अपने शासनकाल के दौरान यहाँ के जनजीवन को भयत्रस्त रखा। अनाचार, अत्याचार और घोर जुल्म यहाँ कि जनता पर ढाये"[5] अफगान शासकों का काल जम्मू व कश्मीर के इतिहास का एक काले दौर के रूप में याद किया जाता है इसी काल में धर्मांतरण अपनी चरम सीमा पर रहा और प्रसिद्ध मंदिरों को विध्वंस कर दिया गया जिसमें वहाँ का प्रसिद्ध मार्तंड मंदिर भी था।

आधुनिक काल: इसी काल के इतिहास में जम्मू व कश्मीर की जनता ने पठानों के अत्याचारों से तंग आकर प्रांत के लोगों ने लाहौर में पंजाब के तत्कालीन शासक महाराजा रणजीत सिंह से मदद की गुहार लगाई और जनता के अनुरोध पर महाराजा ने जम्मू व कश्मीर पर हमला करके वहाँ से पठान शासन का अंत किया जिसके बाद वहाँ पर सिख शासन 1819 ई० में स्थापित किया। 27 जून 1839 ई० में महाराजा रणजीत सिंह की मृत्यु के बाद ब्रिटिश शासन ने सिख शासन को अपने अधिकार में लेने का प्रयास शुरू कर दिया जिसका कारण था सिख शासन में कलह का उत्पन्न होना और 1846 में अंग्रेजों और सिखों के बीच पहली लड़ाई 1846 में लड़ी गई जिसमें दोनों पक्षों के मध्य संधि हुई जिसमें यह फैसला किया गया की सिख शासक अंग्रेजों को हरजाने के तौर पर एक करोड़ की धन राशि देंगे परंतु सिख शासक वह राशि नहीं दे सके जिसके फलस्वरूप व्यास और सतलुज के बीच का बहुत बड़ा पहाड़ी क्षेत्र अंग्रेजों के अधीन

[5] गुप्त, विजय. (2008). खोया हुआ कश्मीर इतिहास के दर्पण में. पृ 35.

हो गया और इसके साथ ही 1846 के आखिर में अमृतसर की संधि हुई जिसमें गुलाब सिंह ने 75 लाख रुपए अंग्रेजों को देना स्वीकार किया जिसके बाद गुलाब सिंह को जम्मू व कश्मीर व गिलगित का शासक मान लिया गया और इसके बाद जम्मू व कश्मीर रियासत में पूर्ण रूप से डोगरा शासन आया और आगे चलकर 1947 में कबायली हमले के समय जम्मू व कश्मीर का भारत के साथ विलय होने तक रियासत में महाराजा हरि सिंह अंतिम डोगरा शासक रहे।

1.2 भारत का विभाजन :

भारत एवं पाकिस्तान के मध्य विभाजन की घटना के कारणों एवं परिणामों का अध्ययन करने से पहले विभाजन के पहले की घटनाओं एवं स्थिति को समझना बहुत ही महत्वपूर्ण हैं और इन घटनाओं की पृष्ठभूमि समझने के लिए भारतीय उप-महाद्वीप के इतिहास को समझना बहुत आवश्यक है क्योंकि अतीत की घटनाओं के संचित कोष का नाम इतिहास है। इतिहास घटनाओं की एक माला के समान है जो काल के सूत्र में पिरोई हुई है और काल से अलग इतिहास की कोई भी हस्ती नहीं है अर्थात काल की भित्ति पर ही इतिहास एक इमारत के समान खड़ा रेहता है व प्रमाणिकता ही इतिहास की प्रमुख शर्त मानी जाती है। और इतिहास जब लिखित या भाषित शब्दों में या अन्य किसी माध्यम से कुछ काल बाद किसी व्यक्ति तक पहुच जाता है तो उसका रूप थोड़ा बहुत तो बदल ही जाता है और अगर इतिहास के उपलब्ध विभिन्न तथ्यों का सही से अध्ययन किया जाए तो निश्चित घटना एवं उसकी स्थिति का सही अनुमान पता लगाया जा सकता है। भारत-पाकिस्तान सीमा क्षेत्रों मे होने वाली फायरिंग एवं युद्धों का इतिहास कहीं-न-कहीं इतिहास मे ही छुपा हुआ है जिसका बीज विभाजन में पड़ा और जो आज एक विशाल वट वृक्ष का रूप लेता जा रहा है जिसकी जड़ें ना सिर्फ धरातल मे हैं बल्कि शाखाओं से भी जड़े निकलने लगी हैं और इसमें आस-पास के वातावरण के लिपट कर घायल होने एवं न छुट पाने की संभावनाएँ दिख रही हैं जिससे कभी आतंकवाद के नाम का जिन्न निकलता है तो आज युद्ध-विराम के उल्लंघन अर्थात

सीजफायर के उल्लंघन की घटनाएँ हमारे सामने हैं। यह घटनाएँ विभाजन के बाद की हैं और विभाजन भारत के इतिहास का एक काला पन्ना और त्रासदी के समान है जिसमें कई वर्षों से साथ रह रहे हिन्दू और मुसलमान अलग-अलग हो गए। भारत ने अपने आजादी की कीमत अपने खून से चुकाई जिसमे भारतवर्ष दो टुकड़ों मे विभाजित हो गया जिससे भारत और पाकिस्तान दो अलग-अलग राष्ट्र बने और बाद मे दो के तीन राष्ट्र बन गए जो की पहले पश्चिमी पाकिस्तान और पूर्वी पाकिस्तान थे बाद में पश्चिमी पाकिस्तान पाकिस्तान के रूप में ही रहा और पूर्वी पाकिस्तान एक नवीन राष्ट्र बांग्लादेश के रूप में विश्व पटल पर प्रस्तुत हुआ। सबसे पहले भारत का विभाजन हुआ जिससे भारत व पाकिस्तान नामक दो राष्ट्रों की उत्पत्ति हुई जिसके बाद पाकिस्तान का भी विभाजन हुआ जिसमें पाकिस्तान व बांग्लादेश नामक अलग-अलग राष्ट्र विश्व पटल पर आए और आज पाकिस्तान, भारत का विभाजन फिर से करवाना चाहता है जिसमें भारत व कश्मीर अलग-अलग राष्ट्र विश्व पटल पर उपस्थित करना चाहता है जिसके लिए पाकिस्तान पूरी कूटनीति से चल रहा है लेकिन देखा जाए तो आज का भारत पहले से ही खंडित भारत है जो पहले दो टुकड़ो मे बटा और बाद में दो के तीन टुकड़े हुए और आज तीन राष्ट्रों के रूप मे हमारे सामने हैं भारत, पाकिस्तान एवं बांग्लादेश विध्यमान है जिनका मूल एक ही राष्ट्र था, वह था भारत।

भारत के विभाजन की पृष्ठभूमि या उसके बीज को जानना हो तो भारत के अतीत को जानना बहुत ही आवश्यक है क्योंकि इससे भारतवर्ष से भारत एवं पाकिस्तान जैसे दो राष्ट्रों के निर्माण की वजह/कारणों को ज्ञात किया जा सकता है।

भारत में विभाजन की स्थिति सबसे पहले 1905 में आई जिसमें ब्रिटिश साम्राज्य ने बंगाल का विभाजन किया और बंगाल विभाजन में अंग्रेजों की रणनीति "डिवाइड एंड रूल" अर्थात फूट डालो और शासन करो की नीति थी। जिससे उन्होंने बंगाल को विभाजित कर दिया था। इसके बाद अगर हम भारत विभाजन के मुख्य कारण एवं अहम भूमिका निभाने वाले दल की बात करें तो वह भी बंगाल विभाजन के

बाद ही अस्तित्व मे आया वह था अखिल भारतीय मुस्लिम लीग जिसकी स्थापना 30 दिसंबर 1906 को ढाका मे हुई थी। अखिल भारतीय मुस्लिम लीग ब्रिटिश भारत मे एक राजनीतिक पार्टी और उपमहाद्वीप में मुस्लिम राज्य की स्थापना से कार फ़रमा शक्ति थी।[6] 20 वीं सदी के आरंभ से ही ब्रिटिश नीतियों के बदलाव से मुस्लिम वर्ग के विद्वत जनों ने एक राजनीतिक दल ,मंच बनाने की जरूरत महसूस की जिसके फलस्वरूप अखिल भारतीय मुस्लिम लीग का उदय हुआ जिसके पहले राष्ट्रपति के रूप में सर आगा खान को चुना गया और उसका केन्द्रीय कार्यालय अलीगढ़ में स्थापित हुआ और पूरे ब्रिटिश भारत में इसकी शाखाए बनाई गई और ब्रिटेन के लंदन शहर में भी एक शाखा बनाई गई जिसका अध्यक्ष सैयद अमीर अली को बनाया गया। मस्लिम लीग आगे चलकर मुहम्मद अली जिन्ना के नेतृत्व मे भारतवर्ष के विभाजन की सूत्रधार रही और दूसरा दल जिसकी भूमिका भी विभाजन मे देखी जाती है कांग्रेस जिसकी स्थापना 1885 मे हुई थी, जिसके संस्थापक ऐलेन ओक्टेवियन ह्यूम थे और दादा भाई नौरोजी एवं दिनशाह जी भी मुख्य सूत्रधार थे इसकी स्थापना "बाम्बे के गोकुलदास तेजपाल संस्कृत महाविद्यालय मे हुई थी"।[7] आगे चलकर कांग्रेस ने बाल गंगाधर तिलक के नेतृत्व मे स्वराज का लक्ष्य अपनाया और तिलक के बाद कांग्रेस गांधी जी के नेतृत्व एवं मार्गदर्शन मे भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम मे अग्रणी भूमिका निभाने लगी जिसमें आगे चल कर सुभाष चंद्र बोस, जवाहर लाल नेहरू, सरदार पटेल, मौलाना आज़ाद का नेतृत्व भी कांग्रेस को मिला। अखिल भारतीय मुस्लिम लीग और काँग्रेस मे काफी मतभेद थे और दोनों के यही मतभेद ही आगे चलकर भारतवर्ष जैसे महान राष्ट्र के विभाजन का कारण बने और फिर इस विभाजन से उत्पन्न हुए कई विवाद एवं समस्याएँ जो की आज भी विद्यमान हैं और इनसे भारतवर्ष की एकता, अखंडता और शांति को बहुत खतरा है। भारत जब साम्राज्यवाद के अधीन था तब भी देश में समस्याएँ थीं। साम्राज्यवाद की समाप्ती की शुरुआत द्वितीय विश्वयुद्ध की शुरुआत के साथ ही हो गई थी।

---

[6] https://hi.wikipedia.org/wiki/अखिल_भारतीय_मुस्लिम_लीग

[7] https://hi.wikipedia.org/wiki/भारतीय_राष्ट्रीय_कांग्रेस

लेकिन अगर विभाजन की बात करें तो 15 अगस्त 1945 को जापान के समर्पण करने बाद द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त तो हो गया परंतु इस युद्ध ने लगभग 6 साल तक पूरे विश्व की राजनीति को संचालित और नियंत्रित किया था। और इसी युद्ध के बाद इंग्लैंड के आम चुनाव मे चर्चिल की हर हुई और उदरवादी लेबर पार्टी चुनाव जीत कर सत्ता मे आ गई जिसमे एटली प्रधानमंत्री बने।

बंगाल विभाजन का मुसलमानो पर प्रभाव: "1905 के बंगाल विभाजन का प्रभाव मुसलमानो पर यह पड़ा कि उन्हे पहली बार एहसास हुआ कि बहुसंख्यक होने के आधार पर किसी क्षेत्र पर केवल उनका भी प्रभुत्व भी हो सकता है। वह पूरी तरह उनके नियंत्रण मे आ सकता है। मुसलमानो का अपना प्रशासन, नीतियाँ व राज्य हो सकता है। इसी एहसास ने परिपक्व और संगठित हो कर भविष्य मे विभाजन के लिए बहुमत होने पर स्वतंत्र व अलग खतरे के सिद्धान्त को विकसित किया"।[8]

अगर विभाजन की बात करें तो द्विराष्ट्र यां दो राष्ट्रों का सिद्धान्त एकदम प्रकट नहीं हुआ था और न ही मुस्लिम लीग के अस्तित्व मे आने के तुरंत बाद प्रकट हुआ था अर्थात "यह समझना भूल होगी कि मुस्लिम लीग बनते ही कांग्रेस और लीग के मध्य गहरे मतभेद शुरू हो गए और तलवारें खिच गयीं"।[9] बल्कि 1920 तक कांग्रेस और लीग के बीच तिलक और जिन्ना के माध्य एवं अहम भूमिका से गहरी समझ, घनिष्ठता, सहयोग और सौहार्द का वातावरण रहा और बाद मे 1915 में गांधी के कांग्रेस मे आने पर जिन्ना और कांग्रेस के संबंध और भी मधुर हो गए और तो और "1915 मे जिन्ना ने यह परंपरा शुरू की कि जिस शहर मे कांग्रेस का अधिवेशन होगा, उसी शहर में, उसी हफ्ते मुस्लिम लीग का भी अधिवेशन होगा जिससे कि दोनों दलों के सदस्य व श्रोता एक-दूसरे के कार्यक्रमों मे भाग ले सकें। यह परंपरा 1921 के अहमदाबाद अधिवेशन तक चली"।[10] भारत में समय निरंतर बदल रहा था और आगे

---

[8] प्रियंवद. (2008). भारत विभाजन की अन्तः कथा. पृ 305.

[9] वही 337.

[10] वही 338.

चलकर भविष्य में मतभेद उभरने लगे। जिनका कारण राजनीतिक आकांक्षाएँ एवं राजनीतिक अधिकार थे जोकि आगे चल कर जब 1927 मे साइमन कमीशन की नियुक्ति हुई तब जिन्ना ने कड़े शब्दों में 30 दिसंबर 1927 को कलकत्ता मे अखिल भारतीय कांग्रेस पार्टी की एक बैठक के दौरान सरकार का कडा विरोध किया और 1929 में "जिन्ना ने अपने सदस्यों को विश्वास दिलाया कि स्वराज पाने के लिए मुस्लिम लीग हिन्दू और मुसलमानों दोनों का सहयोग चाहती है"।[11]

तारा चंद अन्यत्र लिखतें हैं:

"यद्यपि ऑल पार्टी कान्फ्रेंस एवं नेहरू कमेटी, जिसने वर्लीनहेड की चुनौती को स्वीकार कर लिया था, के विचार के समय वह (जिन्ना) भारत में नहीं थे फिर भी कलकत्ता सम्मेलन की मीटिंग में वे मौजूद रहे। वह समझ रहे थे कि नेहरू कमेटी के प्रस्तावों से उनके समुदाय को संतुष्टि नहीं होगी। इसलिए समुदाय की संतुष्टि के लिए कुछ संशोधन पेश किए और उनको आशा थी कि नेहरू रिपोर्ट, जो संयुक्त निर्वाचन मण्डल पर आधारित थी, को उनका समुदाय संशोधन के बाद मान लेगा"[12] । परंतु कांग्रेस एवं सम्मेलन द्वारा उनके संशोधनों को जब खारिज कर दिया गया तब इससे जिन्ना बहुत आहत हुए और जिन्ना का किसी ने समर्थन व बचाव भी नहीं किया बल्कि महासभा के दृष्टिकोण का समर्थन किया।

"फलस्वरूप जिन्ना, जिसको पूर्ण विश्वास था कि कांग्रेस के माध्यम से सांप्रदायिक सद्भावना प्राप्त की जा सकती है, इस भ्रम से मुक्त हो गए। उनका कांग्रेस पर से विश्वास टूट गया"[13] । जिन्ना और कांग्रेस मे मतभेद यहीं उत्पन्न हुआ देखा जा सकता है जिसने आगे चलकर एक गंभीर रूप धारण कर लिया। जिन्ना अब काँग्रेस से अलग हो चुके थे और उनकी राह भी अलग हो चुकी थी। भविष्य मे आगे चल कर यही राह एक नवीन राष्ट्र 'पाकिस्तान' की दिशा में जाने वाली सिद्ध हुई और जब 26 जनवरी 1930 को देश

[11] प्रियंवद. (2008). भारत विभाजन की अन्तः कथा. पृ 358.
[12] वही 358.
[13] वही 359.

में जब पहला स्वाधीनता दिवस मनाया गया तब देश के हर प्रांत जिले में इसे उत्साह और उत्तेजना के साथ मनाया गया जिसमें हजारों सभाएं हुई, लोगों ने पूर्ण स्वराज का संकल्प लिया और पूरे देश में एक प्रकार की भावनात्मक लहर दौड़ रही थी। इस समय भी जिन्ना को फिर से हासिए पर रखा गया था और "जिन्ना ने इसका कड़ा विरोध किया इसलिए नहीं कि पूर्ण स्वराज से उनका विरोध था बल्कि इसलिए कि इस पूरे प्रसंग में मुसलमानों को, मुस्लिम लीग को और जिन्ना को इस महत्वपूर्ण कदम को उठाते समय हासिए पर छोड़ दिया गया था। जिन्ना का मन भारत से अब उखड़ गया था"[14]। अंततः खिन्न, खंडित, क्रुद्ध-क्षुब्ध एवं निराश जिन्ना 4 अक्तूबर 1930 को भारत से इंग्लैंड चले गए। और इससे कांग्रेस और लीग को जोड़ने वाला एक महत्वपूर्ण पुल जिसने 25 वर्षों तक हिन्दू समाज और मुस्लिम समाज के बीच एक समन्वयी रास्ता ढूढ़ने की कोशिश की और अब वह अपनी कोशिशों की समाप्ती की ओर था और जिन्ना की इस समय की स्थिति ही पाकिस्तान की प्रखर मांग एवं किसी भी समझौते के लिए अडिग रहे और अंततः पाकिस्तान की उत्पत्ति हमारे सामने है। पाकिस्तान की उत्पत्ति हो जाने से पहले या पाकिस्तान की अवधारणा को पक्का करने वाले, इकबाल पाकिस्तान के वैचारिक जनक थे। 1930 के इलाहाबाद मे हुए मुस्लिम लीग के अधिवेशन के अध्यक्ष इकबाल थे। अपने भाषण के दौरान उन्होने कहा था कि- "जहां तक मैं मुसलमानों की मानसिकता को समझता हूँ, तो मुझे यह कहने मे कोई हिचकिचाहट नहीं है कि यदि इस सिद्धान्त को, कि भारतीय मुसलमान अपनी भारतीय निवासभूमि (होमलैंड) में, अपनी सभ्यता और परम्पराओं की लीक पर अपने सम्पूर्ण और मुक्त विकास का अधिकारी है, स्थाई सांप्रदायिक विवाद के निपटारे के आधार के रूप मे स्वीकृत किया जाता है, तो वह (भारतीय मुसलमान) भारत की आज़ादी के लिए अपना सब कुछ दाँव पर लगाने को तैयार है... मुसलमानों की मांग है कि भारत के अंदर एक मुसलमान भारत बने इसलिए पूरी तरह औचित्यपूर्ण है... मैं चाहूँगा कि पंजाब, उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रांत, सिंध और बलूचिस्तान एक राज्य के अंदर समाहित हो जाएँ। ब्रिटिश साम्राज्य अथवा

[14] प्रियंवद. (2008). भारत विभाजन की अन्तः कथा. पृ 361.

गैर ब्रिटिश समाज के अंदर, एक एकीकृत उत्तर-पश्चिमी भारतीय मुस्लिम राज्य की स्वतंत्र सरकार, मुझे मुसलमानों की आखिरी नियति लगती है, कम से कम उत्तर-पश्चिमी भारत के मुसलमानों की''[15]। इकबाल के इस भाषण के सुझाव को पाकिस्तान का उद्भव माना जाता है परंतु पाकिस्तान किसी एक के कहने या सोचने से नहीं बना बल्कि वह धीरे-धीरे अपने स्वरूप में आया परंतु इकबाल का कथन अलग राष्ट्र के रूप में नहीं देखा जा सकता क्योंकि "इकबाल ने भाषण में निरंतर एक केंद्रीय संघ की बात कही जिसमे छोटे-छोटे राज्यों को भी अधिकार व शक्तियाँ प्राप्त हों। इकबाल के भाषण की सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात, भारत की सुरक्षा को लेकर उत्तर पश्चिमी प्रांत मे बनाने वाले मुस्लिम राज्य कि ज़िम्मेदारी की बात थी। यह स्पष्ट बताता है कि इकबाल इस मुस्लिम राज्य को भारत से अलग नहीं बल्कि उसके रक्षक के रूप में देखते थे''[16]। परंतु कई इतिहासकार मानते हैं कि 'पाकिस्तान' शब्द का निर्माण पाकिस्तान का पहला प्रस्तावित नक्शा पाकिस्तान के लिए 'पाकिस्तान नेशनल मूवमेंट' आदि नाम से पहले संगठन का निर्माण करने वाला व्यक्ति एक पंजाबी मुस्लिम "रहमत अली था जो कि कैम्ब्रिज विश्वविद्यालया मे एक अंडर ग्रेजुएट था। इकबाल के जो सुझाव 1930 मे अपने अध्यक्षीय भाषण मे उन्होने दिये थे रहमत आली ने उन्हीं विचारों को अधिक विस्तार एवं तर्क देकर अपनी मुस्लिम पक्षधरता को आक्रामक एवं विघनकरी बनाते हुए 1933 में अपना चार पन्ने का अपना वह मशहूर पर्चा जारी किया जिसमे पाकिस्तान की पूरी रूपरेखा थी। उसने स्पष्ट रूप से कहा की पंजाब, उत्तर पश्चिम सीमा प्रांत(अफगान प्रांत भी कहा जाता है।) कश्मीर, सिंध और बलूचिस्तान को मिलकर एक अलग राजी बने जिसका नाम 'पाकिस्तान' हो। पाकिस्तान शब्द के अक्षर इन्ही प्रान्तों के प्रथम अक्षरों से लिए गए हैं। जिनमें -

P- पंजाब

---

[15] प्रियंवद. (2008). भारत विभाजन की अन्तः कथा. पृ 365.

[16] वही 382.

A- अफगान प्रांत (उत्तर-पश्चिम सीमा प्रांत के लिए)

K- कश्मीर

S- सिन्ध

TAN- बलूचिस्तान

के लिए प्रयुक्त हुये हैं "।[17] रहमत अली ने अपना पहला पर्चा 28 फ़रवरी 1933 में जारी किया और 1935 में पाकिस्तान राष्ट्रिय आंदोलन के संस्थापक के रूप में स्वयं की घोषणा की और 1930 में इकबाल जिस राज्य की कल्पना कर रहे थे उसकी एक अलग प्रांत या राष्ट्र की कल्पना रहमत अली ने 'पाकिस्तान' नाम से प्रस्तुत कर दी जोकि आगे चलकर 23 मार्च 1940 को लाहौर में हुए लीग के अधिवेशन में पारित प्रस्ताव को जिसे लाहौर प्रस्ताव कहा जाता था जोकि बाद में 'पाकिस्तान प्रस्ताव' के नाम से मशहूर हुआ जिससे आगे चलकर 'पाकिस्तान' या 'दो-राष्ट्र' के सिद्धान्त को राजनीतिक तौर पर स्थापित कर प्रस्तुत कर दिया। 4 मार्च 1934 में जिन्ना भारत वापिस लौटे थे और लीग व लीग के अलग-अलग धड़ों ने मिलकर उनका स्वागत किया और सबने आपसी सहमति बनाकर मुस्लिम में जिन्ना का नेतृत्व स्वीकार किया और इसके बाद जिन्ना 23 अप्रैल 1934 को वापिस लंदन लौटे फिर दिसम्बर 1934 में जिन्ना पुनः स्थायी रूप से बम्बई वापिस आ गए। इसके बाद 1937 के चुनाव से भारत में राजनीतिक उठा-पठक एवं बदलाव देश को देखने को मिला 1937 के प्रथम सप्ताह के चुनाव देश के महत्वपूर्ण चुनाव थे और इन चुनावों ने आगे चलकर राजनीतिक परिदृश्य को उलट-पुलट कर रख दिया जिसके बाद 1940 का दशक राजनीतिक उथल-पुथल का दौर रहा।

[17] प्रियवंद. (2008). भारत विभाजन की अन्तः कथा. पृ 389.

1940 के बाद बदलते राजनीतिक परिप्रेक्ष्य भारतीय इतिहास में राजनीतिक उथल-पुथल की तेजी का दौर चालीस के दशक मे प्रारम्भ हुआ। जिसका कारण कहीं-न-कहीं द्वितीय विश्वयुद्ध व साथ ही विश्व पटल पर भी राजनीतिक स्थिति का तेजी से बदलना भी एक अन्य कारण था। 1940 के बाद ही भारत में द्वि-राष्ट्र के सिद्धान्त का प्रचार बढ़ा और अंततः विभाजन तक गया परंतु इसके मध्य विभाजन के बिना भी सुलह के प्रयास किए गए थे जिसमे चाहे क्रिप्स मिशन का भारत में आना हो या कैबिनेट मिशन के द्वारा संविधान सभा के मार्ग द्वारा संयुक्त अन्तरिम सरकार के गठन का प्रयास हो परंतु अंततः सभी प्रक्रियाएँ असफल रहीं और भारत के विभाजन की प्रक्रिया चल पड़ी। "22-24 मार्च 1940 को लाहौर अधिवेशन मे कांग्रेस के जबाब में एक साधी हुई चल की तरह मुसलमानों के लिए एक अलग स्वायत्त क्षेत्र का ऐतिहासिक प्रस्ताव पारित कर दिया"।[18] इसी को 'लाहौर प्रस्ताव' और आगे चल कर इसी को 'पाकिस्तान प्रस्ताव' के नाम से जाना जाने लगा। "इसी तरह 23 मार्च 1940 को मुस्लिम लीग के अधिवेशन में लाहौर प्रस्ताव (पाकिस्तान प्रस्ताव) पारित हुआ। भारत के कुछ मुसलमानों के लिए अब पाकिस्तान के रूप में अपना अलग राज्य, एक धून्धलाई हुई पर पकड़ में आती हुई वस्तिकता था"।[19] और इस अधिवेशन के बाद जिन्ना अपने पाकिस्तान अथवा पृथक राष्ट्र के सिद्धान्त पर अडिग हो गए क्योंकि "इस प्रस्ताव के पारित होने के बाद लीग ने 1942 मे एक प्रस्ताव के द्वारा जिन्ना को बहुत अधिक शक्तियाँ प्रदान की और यह भी ऐलान किया कि जिन्ना ही लीग के एक मात्र प्रतिनिधि हैं और मुस्लिम देश बनाने के लिए जिन्ना को लीग हर प्रकार के अधिकार देती है"।[20] इसके बाद लीग की जिन्ना के माध्यम से पृथक राष्ट्र के अधिकार के लिए गतिविधियां चलती रहीं। द्वीतीय विश्वयुद्ध के दौरान ब्रिटिश सरकार ने मार्च 1942 को स्टैफोर्ड क्रिप्स को भारत भेजा उस समय भारत पर जापानी हमले की संभावना बढ़ गई थी और ब्रिटिश सरकार भारतीय समर्थन चाहती थी। भारत में अंग्रेजों से आज़ादी की मांग तेज़

---

[18] प्रियंवद. (2008). भारत विभाजन की अन्तः कथा. पृ 435.

[19] वही 441.

[20] सिंह, कुमार. सञ्जय. (2005). राजीव गांधी के प्रधानमंत्रित्व-काल में भारत-पाक संबंध. पृ 14.

चल रही थी ऐसे में भारत के राजनेताओं और ब्रिटिश सरकार के बीच समर्थन को लेकर कोई समझौता करने के लिए क्रिप्स भारत भेजे गए थे। क्रिप्स अपने साथ समझौतों का कुछ मुसोदा भी साथ लेकर आए थे जिनमें डॉमिनियन स्टेट्स व एक नई संविधान सभा का गठन करने जोकि चुनाव के माध्यम से होगा आदि सुझाव थे परंतु क्रिप्स मिशन कुछ सफल नहीं रहा और वह 11 अप्रैल 1942 को स्वदेश वापिस लौट गए। काँग्रेस ने गांधी जी के नेतृत्व में भारत छोड़ो आंदोलन किया जिससे भारतीय जनता के बीच ब्रिटिश सरकार के प्रति आक्रोश, जनाक्रोश के रूप में प्रकट हुआ इससे ब्रिटिश सरकार को स्पष्ट हो गया कि अब भारतीय भूमि पर ज्यादा समय तक शासन करना अब आसान नहीं है और विश्वयुद्ध में जापान की हार और आत्मसमर्पण के बाद द्वितीय विश्वयुद्ध अंतिम रूप से समाप्त हो गया और साथ ही अब विश्व पटल पर राजनीतिक स्थितियाँ बिलकुल बदल गई थी। इंग्लैंड में भी अब स्थिति बदल गई थी जिसमें चर्चिल चुनाव हार गए और उदरवादी लेबर पार्टी चुनाव जीत कर सत्ता में आई जिसमे एटली प्रधानमंत्री बने और और लॉर्ड पैट्रिक लौरेंस भारत के माम्म्लोन के राज्य सचिव। सितम्बर 1945 में प्रधानमंत्री एटली ने रेडियों पर यह कहा कि "भर्तियों को एक ऐसा संविधान तैयार करना चाहिए जो समस्त दलों को स्वीकार हो और भारत के हित में हो क्योंकि एटली भारत को सत्ता सौपने के पक्ष में थे और वह चाह रहे थे कि मिल-जुल कर कोई एक रास्ता निकाला जाए जो सभी दल मिलकर निकालें और इसी क्रम में भारत में चुनावों कि घोषणा हो गई। "1945के आखिर में जब ब्रिटिश शासन समाप्त होने के कगार पर था तो उन्होने संवैधानिक रियायतें देकर इसे टालने की कोशिश की रियायतें न देने का जोखिम वे नही उठा सकते थे ओर यदि ऐसा किया जाता तो जन आंदोलनशुरु हो जाता जिसे काबू में करना मुसकिल हो जाता। बातचीत के टूटने की आशंका से बचने के लिए कांग्रेस की मांग के अनुसार रियायतें देना जरूरी था। कांग्रेस ने भारत छोड़ो की मांग की थी और इसकी बहुसंख्या ने समर्थन भी किया था। इसे देखते हुए राष्ट्रीय सरकार की स्थापना और सत्ता स्थानांतरण की कार्यवाही शुरू करने के लिए 1946 मे कैबिनेट

मिशन भारत आया"[21] कैबिनेट मिशन भेजने का प्रयास भारत को एक सूत्र में बांधकर एक संविधान सभा के माध्यम से नया संविधान बनाने और सभी दलों द्वारा एक कैबिनेट अथवा अन्तरिम सरकार का गठन करना था। इसकी नीति को स्वरूप देते हुए ब्रिटेन कि सरकार ने जनवरी 1946 को कैबिनेट मिशन को भेजने का फैसला किया जिसके सदस्य थे स्टैनफोर्ड क्रिप्स, पैट्रिक लौरेंस और ए. बी. एलेक्जेंडर थे इससे पहले भारत में चुनाव के परिणाम आ चुके थे जिसमे कांग्रेस और लीग ने अपने-अपने प्रभाव क्षेत्रों में जनमत जनादेश काफी मात्र में पाया था जो की धार्मिक दृष्टि से भी एक पृथक इशारा कर रहा था इसी क्रम मे कैबिनेट मिशन का गठन और भारत आगमन भारतीय राजनीति को एक मंच पर लाकर कोई एक संवैधानिक ढंग से सत्ता का हस्तांतरण करने का प्रयास था। कैबिनेट मिशन के सदस्यों ने भारत के विभिन्न तत्कालीन राजनीतिक, अ-राजनीतिक दलों, रजवाड़ों के प्रतिनिधियों आदि से बातचीत की और 'कैबिनेट मिशन प्रस्ताव' प्रस्तुत किए। विभिन्न दलों में समझौता ना होते हुए भी मिशन में भावी संविधान बनाने के लिए योजना प्रस्तुत की-

1. भारतीय संघ की स्थापना की जाए जिसमें भारतीय राज्य व प्रांत सम्मिलित हो और संघ के पास प्रतिरक्षा, विदेशी संबंध तथा संचार व्यवस्था का उत्तरदायित्व रहे। संघ को दिये गए इन अधिकारों के अतिरिक्त शेष सभी अधिकार प्रान्तों अथवा राज्यों को प्राप्त होंगे।
2. संविधान निर्माण के लिए एक संवैधानिक सभा का गठन किया जाए। प्रांतीय विधान सभाएं प्रत्येक दस लाख जनसंख्या पर एक सदस्य के अनुपात मे प्रतिनिधि चुने।
3. प्रान्तों को पृथक समूह बनाने का अधिकार हो। प्रत्येक समूह को यह निर्णय करने का अधिकार हो कि कौन-कौन से विषय समूह के अधिकार मे रखे जाएँ।

[21] महाजन, सुचेता. (2005). स्वाधीनता और विभाजन भारत में औपनिवेशिक सत्ता का पतन. पृ. 111.

4. संघ और समूह के संविधान में इस तरह कि व्यवस्था की जाए कि प्रत्येक दस वर्ष के बाद कोई भी प्रांत अपने विधान मण्डल के बहुमत से संविधान में संशोधन का प्रस्ताव कर सके।
5. तब तक के लिए केंद्र में एक अन्तरिम सरकार की स्थापना हो और उसमें प्रमुख भारतीय दलों के प्रतिनिधि रहें। केंद्रीय शासन के सभी विभाग इन्ही प्रतिनिधियों के अधीन होगा"[22]।

इसके बाद 6 जून 1946 को लीग ने इस योजना को स्वीकृति दे दी और 25 जून को कांग्रेस ने भी इस योजना को स्वीकृति दे दी जिससे अंततः 29 जून को 'मिशन' के सदस्य ब्रिटेन लौट गए। लेकिन 10 जुलाई 1946 को कांग्रेस के अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू के विवादास्पद बयान दिया जिसमें उन्होने कहा कि "हम किसी भी चीज से बधें नहीं हैं सिवाय इसके कि हमने संविधान सभा में जाना तय कर लिया है"[23] जिसकी जिन्ना ने कड़ी आलोचना की और कांग्रेस और ब्रिटिश सरकार के प्रति अपना द्वी-राष्ट्र का सिद्धांत और मजबूती से दृढ़ कर दिया अब जिन्ना सिर्फ पाकिस्तान ही चाहते थे। फलतः 29-30 जुलाई को लीग ने कैबिनेट कि योजना को नामंज़ूर कर दिया और 16 अगस्त के दिन को 'सीधी कार्यवाई' का दिन निर्धारित कर दिया जिससे देश में हिंसा भड़क गई और मुख्य रूप से नोआखाली में भीषण दंगे भड़के और इसके बाद 20 फरवरी 1947 को एटली ने घोषणा कर दी कि जून 1948 तक तक ब्रिटेन भारत को हर हाल में सत्ता हस्तांतरण कर देगा। भारत अब बड़ी तीव्र गति से सत्ता हस्तांतरण अथवा दूसरे शब्दों में कहें तो बटवारे की ओर बढ़ गया और अब लीग को भी सिवाय पाकिस्तान के कोई प्रस्ताव या समझौता स्वीकार नहीं था।

इसके बाद भारत देश के इतिहास के काले पन्ने का अध्याय शुरू हुआ जिसे भारत का विभाजन कह सकते हैं। इसी विभाजन के कारण आगे चलकर रियासतों की समस्याएँ सामने आई

---

[22] सिंह, कुमार. सञ्जय. (2005). राजीव गांधी के प्रधानमंत्रितव-काल मे भारत-पाक संबंध. पृ. 15.
[23] प्रियंवद. (2008). भारत विभाजन की अन्तः कथा. पृ. 469.

जिसमें जम्मू व कश्मीर की समस्या भी एक है जिसका संबंध भी भारत के विभाजन से ही है और इसकी योजना मार्च 1947 को लार्ड माउंटबेटेन अपने साथ लेकर आए थे। माउंटबेटेन ने 24 मार्च 1947 को अपना कार्यभार संभाला और भारतीय राजनीति की स्थिति को समझने एवं राजनेताओं से विमर्श में लग गए। 31 मार्च 1947 को वायसराय ने गांधी जी के साथ वार्ता की और 6 अप्रैल 1947 को जिन्ना से वार्ता की फिर 15-16 अप्रैल को गर्वनरों से सत्ता हस्तांतरण के ड्राफ्ट की मंजूरी लेकर वार्ता की इसके बाद 2 जून को माउन्टबेटेन ने भारतीय राजनेताओं से मिलकर विभाजन की योजना बताई और 3 जून को माउन्टबेटेन, नेहरू, जिन्ना और बलदेव सिंह ने रेडियों पर विभाजन के प्रस्ताव के विषय में बताया जिसके बाद 4 जून को माउन्टबेटेन ने प्रेस को विभाजन के प्रस्ताव के विषय में बताया। इस योजना को 'माउन्टबेटेन योजना' के नाम से जाना जाता है। इस योजना के मुख्य प्रावधान निम्न थे:

1. वर्तमान संविधान सभा अपने काम में लगी रहेगी। प्रतिपक्ष अपनी अलग संविधान सभा स्थापित करेगा।
2. पंजाब और बंगाल का विभाजन जिला स्तर पर जनसंख्या के बहुमत के आधार पर किया जाएगा। इसका तरीका यह होगा कि मुसलमान बहुल व हिन्दू बहुल जिलों के विधान सभा के सदस्य अलग-अलग समूह में एकत्रित होंगे। उनमें से एक समूह भी साधारण बहुमत से भी विभाजन के पक्ष में मतदान करेगा तो उस प्रांत का विभाजन होगा। बंगाल और पंजाब दोनों प्रान्तों के लिए यह व्यवस्था होगी।
3. उत्तर पश्चिम सीमा प्रांत के लोग जनमत संग्रह के माध्यम से फैसला करेंगे कि उन्हे किस संविधान सभा में शामिल होना है। असम के सिलहज जिले के लिए भी येही व्यवस्था होगी।
4. भारत और पाकिस्तान के उत्तराधिकारी डॉमिनियन सरकारों को सत्ता सौंप दी जाएगी। वे दोनों उत्तराधिकारी राज्य सत्ता हस्तांतरण से उत्पन्न मुद्दों पर ब्रिटिश सरकार से नया करार करेंगे।

5. रजवाड़ों पर ब्रिटिश परमसत्ता (paramountacy) समाप्त हो जाएगी। उन्हे दोनों संघों में किसी एक में शामिल होने अथवा अपनी स्वतंत्र सत्ता बनाए रखने का अधिकार होगा।
6. सिंध में यह फैसला विधान सभा को करना था कि वह वर्तमान संविधान सभा में जाएँ अथवा नयी संविधान सभा में।
7. बलूचिस्तान के मामले में क्वेटा नगरपालिका और कबीलों के प्रतिनिधियों से राय मशविरा के आधार पर पुरानी या नयी संविधान सभा में जाने कि बात का फैसला होगा।

माउंटबेटन ने नेहरू, जिन्ना, पटेल तथा बलदेव सिंह से इस योजना को पहले ही अनुमोदन करा लिया था। इसके साथ ही 4 जून 1947 को माउंटबेटन ने घोषणा कर दी कि हर हालत में 15 अगस्त 1947 तक ब्रिटेन सत्ता का हस्तांतरण कर देगा"[24] इसके बाद जून में ही पंजाब ओर बंगाल कि विधानसभा ने विभाजन के पक्ष में मतदान कर दिया और बलूचिस्तान, उत्तर-पश्चिम सीमा प्रांत, सिंध तथा सिलहट की जनता ने भी पाकिस्तान में चले जाने का निर्णय किया और इससे पाकिस्तान का क्षेत्र निश्चित हो गया।

काँग्रेस, मुस्लिम लीग व अन्य दलों ने विभाजन पर स्वीकृति कर दी थी और 3 जुलाई को माउंटबेटन योजना को अमलीजामा पहना दिया गया और इंडियन इंडिपेंडेंस एक्ट अथवा भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम 1947 के लिए ब्रिटिश सरकार की पूरी योजना लिख कर भेज दी जिसे "4 जुलाई 1947 को यह बिल इंग्लैंड में हाउस ऑफ कॉमन्स में प्रधानमंत्री ने रखा। 5 जुलाई को हाउस ऑफ कॉमन्स ने इसे पारित कर दिया। 16 जुलाई को हाउस ऑफ लॉर्ड्स में बिल पास हो गया। 18 जुलाई को इस पर राजशाही की मोहर लग गई और यह कानून बन गया"।[25] इस कानून/बिल के अंतर्गत 15 अगस्त

---

[24] प्रदान, रामचंद्र. (2012). राज से स्वराज भारत में उपनिवेश वाद का इतिहास. पृ. 397.
[25] प्रियंवद. (2008) भारत विभाजन की अन्त: कथा. पृ. 566.

1947 को दो डॉमिनियन 'इंडिया' ओर 'पाकिस्तान' बनने की बात थी इसके बाद शुरू हुई रियासतों को डॉमिनियन में मिलाने की रणनीति और क्षेत्र को डॉमिनियन के नक्शे में जोड़ना "पंजाब और बंगाल में बँटवारे के आधार पर सीमा तय करने के लिए रेडक्लिफ की अध्यक्षता में एक सीमा निर्धारण आयोग बनाया गया जिसने इस काम को पूरा किया। इसके अलावा 'पारटिशन काउंसिल' एवं आर्बीट्रेशन ट्रिवूनल भी बनाया ताकि विभाजन से उपजे सवालों को सुलझाया जा सके"।[26] इसके बाद भी कई समस्याएँ बनी रही जिनमें सबसे महत्वपूर्ण समस्या रियासतों के विलय की थी और खासकर भारतीय उपनिवेश के अंदर बहुत सी रियासतें थी जिन्हे अब किसी एक डॉमिनियन के साथ जुडने का फैसला करना था जिसमें कई रियासतों ने स्वतंत्र रहने का प्रयास भी किया जिनमें भोपाल, हेदराबाद, त्रावणकोर-कोचीन और कश्मीर थे। सरदार पटेल और वी॰पी॰ मेनन के प्रयासों एवं बुद्धिमतापूर्ण निर्णय के चलते अधिकतर रजवाड़े भारत के साथ मिल गए। रियासतों के विलय के साथ-साथ 15 अगस्त 1947 से पहले और भी कई गतिविधियां चलती रही जिनमें सेना का वंटवारा, "नगद-रुपए, कर्जे, अंतरराष्ट्रिय समितियां, दोनों देशों के बीच पासपोर्ट की प्रक्रिया आदि छोटे और बड़े मसलों पर अनेक समितियों की अनेक बैठकों में बैठकर, सहमति पर पहुँचते हुए विवाद को निपटाया गया"।[27] इसके बाद 11 अगस्त को जिन्ना कराची चले गए और 11 अगस्त को पाकिस्तान की संविधान सभा की बैठक में जिन्ना को सभा का राष्ट्रपति चुना गया और 14 अगस्त 1947 को पाकिस्तान अस्तित्व में आ गया। 15 अगस्त 1947 को जिन्ना ने पाकिस्तान के गवर्नर जनरल की शपथ ली और लियाकत अली खाँ के नेतृत्व में पाकिस्तान के नए मंत्रिमंडल ने शपथ ली। भारत में 14 अगस्त की रात को संविधान सभा की बैठक चली और उसी रात अर्थात 15 अगस्त 1947 की सुबह लॉर्ड माउंटबेटन ने भारत के पहले गवर्नर जनरल की शपथ ली और पंडित जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में भारत के नए मंत्रिमंडल ने शपथ ली इसके साथ ही 190 साल

---

[26] प्रदान, रामचन्द्र. (2012). राज से स्वराज भारत में उपनिवेश वाद का इतिहास. पृ 399.

[27] प्रियंवद. (2008). भारत विभाजन की अन्तः कथा. पृ 574.

पुराना ब्रिटिश शासन जोकि 1757 में अंग्रेजों ने शुरू किया था वह दो डॉमिनियनों के निर्माण के साथ समाप्त हो गया।

1.3 भारत विभाजन व कश्मीर की समस्या का उदय:

भारत एवं पाकिस्तान के 1947 में बनने के साथ ही दोनों डॉमिनियन में देसी रियासतों को अपने साथ मिलाने को लेकर खिंचतान शुरू हो गई। भारत एवं पाकिस्तान को सत्ता हस्तांतरण करते समय ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली ने "भारतीय स्वाधीनता बिल पर बोलते हुए एटली ने हाउस ऑफ कॉमन्स में कहा कि "रियासतों के राजा समय रहते हुए 'ब्रिटिश कॉमनवैल्थ' के दोनों डॉमिनियन (भारत तथा पाकिस्तान) में से किसी एक में अपनी उचित जगह ढूंढ लेंगे। यदि किसी भारतीय रियासत ने इससे अलग होने और स्वतंत्र रहने का फैसला किया तो, "एटली ने जोड़ा, मैं रियासतों के राजाओं से कहूँगा, पूरा समय लो, फिर से सोचो और मुझे आशा है कि अलग रहने का कोई भी अवांधित निर्णय किसी राजा द्वारा अपरिपक्व रूप में नहीं लिया जाएगा"।[28] 1947 में जब भारत तथा पाकिस्तान अस्तित्व में आए तब तक कश्मीर, हैदरावाद तथा जूनागढ ने कोई निर्णय नहीं लिया था और आगे चलकर इन्ही तीन रियासतों के कारण काफी विवाद भी हुआ और डॉमिनियन से मिलने में समस्या भी आई जिनमे जूनागढ़ तथा हैदरावाद हिन्दू बहुल रियासतें थी और इनके शासक मुस्लिम थे परंतु सरदार पटेल कि भूमिका एवं नीति के कारण यह समस्या सुलझ गई और दोनों रियासतें विभाजन के कुछ ही महीनों में भारत में विलय हो गई जिसका जिन्ना और पाकिस्तान पर इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ा और अब जिन्ना कश्मीर को पाकिस्तान में हर हाल में मिलना चाहते थे क्योंकि भूगोलिक स्थिति से भी तथा मुस्लिम बहुल राज्य होने के कारण भी जिन्ना कश्मीर को पाकिस्तान के साथ मिलने के पक्ष में थे परंतु जम्मू व कश्मीर के तत्कालीन डोगरा शासक महाराजा हरि सिंह एक हिन्दू शासक थे और उस समय महाराजा ने कोई निर्णय न करके स्वतंत्र

[28] प्रियंवद. (2008). भारत विभाजन की अन्तः कथा. पृ. 570.

राज्य के रूप में रहने का विचार कर रहे थे और उनका यह सोचना सही भी था क्योंकि "जम्मू व कश्मीर केवल भारत का पड़ोसी राज्य ही नहीं, बल्कि यह एक ऐसा राज्य था जिसकी सीमाएं रूस, अफ़ग़ानिस्तान, चीन, तिब्बत तथा सिक्यांग से मिलती थी। इसलिए अपनी इस वशिष्ट भौगोलिक स्थिति से उसका एक अंतरराष्ट्रिय महत्व था। स्विट्ज़रलैंड की तरह जम्मू व कश्मीर को एक बेफर (तटस्थ) राज्य बनाकर महादेशों के मध्य शक्ति संतुलन को संतुलन को बनाए रखने की कल्पना कई बड़े राजनेताओं के मन के भीतर गहरी थी"।[29] और जम्मू व कश्मीर के महाराजा को उनके सलाहकार भी जम्मू व कश्मीर की स्वतंत्र स्थिति को बनाए रखने के लिए सुझाव देते रहे जिससे की उन्हे भारत या पाकिस्तान के साथ विलय की अवश्यकता नहीं है परंतु उस समय कश्मीर में राजनीतिक स्थिति भी बदल रही थी यह भी एक विचारणीय बिन्दु है 1946 में शेख अब्दुल्लाह ने कश्मीर छोड़ो आंदोलन चलाया था और उन्हे जेल में दाल दिया गया था परंतु राज्य में राजनीतिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी अर्थात तत्कालीन शासक राज्य में किसी भी तरह से विद्रोह या आंतरिक राजनीतिक उथल-पुथल की उत्पत्ति नहीं होने देना चाहते थे क्योंकि जम्मू व कश्मीर के महाराजा, विश्व पटल पर तेज़ी से बदलते राजनीतिक बदलाव एवं विद्रोह से उत्पन्न सत्ता परिवर्तन, दंगो, विभाजन की समस्या और विभाजन से उत्पन्न अन्य समस्याओं को देख व समझ रहे थे और "12 अगस्त 1947 को महाराजा हरि सिंह ने पाकिस्तान और भारत को अपनी स्थिति यथावत बनाए रखने के लिए संधिपत्र के प्रस्ताव भेजे"[30] परंतु पाकिस्तान की मंशा कश्मीर को अपने डॉमिनियन के साथ मिलने की थी और इसके लिए पाकिस्तान ने बड़ी कूटनीति का सहारा लेकर पाकिस्तान की नई सरकार ने कश्मीर की आर्थिक नाकेबंदी कर दी और अनाज के साथ-साथ अन्य जरूरी आवश्यक सामानों के ट्रक सीमा पर रोक लिए और जम्मू व कश्मीर पर सीधे तौर पर तो नहीं पर परोक्ष ढंग से आक्रमण शुरू कर दिया जिससे स्थानीय लोगों के लिए कई समस्याएं उत्पन्न हो गई और

---

[29] गुप्त, विजय. (2008). खोया हुआ कश्मीर इतिहास के दर्पण में. पृ. 51.
[30] वही 52.

इसके विरोध में तत्कालीन प्रधानमंत्री (जम्मू व कश्मीर) ने ब्रिटिश सरकार से शिकायत की एवं समाधान की प्रार्थना भी की परंतु कोई सकारात्मक हल नहीं निकला और इस प्रकार की कूटनीति का लक्ष्य जम्मू व कश्मीर में महाराजा के खिलाफ विद्रोह अर्थात व्यवस्था ठीक ढंग से न चलाने के कारण विद्रोह को उत्पन्न करना और साथ ही पाकिस्तान, जम्मू व कश्मीर में परोक्ष तरीके से कबायलियों को व कबयलियों के वेश में पाकिस्तानी सेना को जम्मू व कश्मीर में उतार दिया जिसका मुख्य क्षेत्र मीरपुर,कोटली,राजौरी, देवाबटाला पलोन्द्री, रावला, कोट, बाग, मुजफ्फराबाद, उडी, पुंछ आदि क्षेत्र थे। 20 अक्तूबर 1947 को कबायलियों एवं उनके उनके वेश में पाकिस्तानी सेना ने जम्मू व कश्मीर पर आक्रमण कर युद्ध थोप दिया। जिससे 22 अक्तूबर 1947 को लगभग 2500 कबयलियों ने मुजफ्फराबाद से प्रवेश करके रियासत में तबाही मचाना शुरू कर दी और जम्मू व कश्मीर रियासत की सेना जोकि रियासत की सीमाओं पर चोकसी के लिए थी वह इन कबायलियों का प्रचुर मात्रा में सामना करने में असमर्थ सीध हो रही थी और जम्मू व कश्मीर में स्थिति बहुत तेज़ी से नियंत्रण से बाहर जा रही थी "23-24 अक्तूबर 1947 को कश्मीर नरेश महाराजा हरि सिंह परिस्थितियों की विवशता को पहचानकर, वस्तुस्थिति की सत्यता को पहचानते हुए, तथा जनता की सुरक्षा से चिंतित होकर, हर प्रकार की मजबूरी को आत्मसात करके बार-बार भारत सरकार से सहयोग की अपील कर रहे थे। महाराजा ने अपने वजीरे-आजम मेहरचंद महाजन को भी दिल्ली भेज रखा था"।[31] जम्मू व कश्मीर की शांति पाकिस्तान द्वारा भंग कर दी गई थी और रियासत को मद्द की बहुत आवश्यकता थी जो विद्वान भारतवर्ष एवं यहाँ के रजवाड़ों को समझने का दावा करते थे, जिनमें जिनमें ब्रिटिश अधिकारी भी थे जो ये जानते थे कि राजा कभी भी अपना आधिपत्य लोकतान्त्रिक नेताओं के आगे समर्पित नहीं करेंगे और जिन रजवाड़ों के पास अपनी सेना है वह अपनी रक्षा भी कर सकते हैं फिर भी भारतवर्ष का विभाजन करते समय ब्रिटिश सरकार एवं अधिकारियों को रियासतों के विलय को लेकर कोई ठोस नियम बनाने चाहिए थे जिससे कि रियासतों के विलय में भविष्य में कोई

[31] गुप्त, विजय. (2008). खोया हुआ कश्मीर इतिहास के दर्पण में. पृ. 143.

विवाद न उत्पन्न नहीं होता जैसा कि जम्मू व कश्मीर को लेकर भारत-पाकिस्तान के मध्य बना और आज तक विद्यमान है। भारत-पाकिस्तान दो अलग-अलग डॉमिनियन के रूप में उभरे तब कश्मीर को लेकर दोनों का विवाद काफी अधिक था जिसने अब युद्धों का रूप ले लिया था और कश्मीर नरेश भारत सरकार की सहायता से जम्मू व कश्मीर रियासत की कबायली हमले से रक्षा करना चाहते थे और जब रियासत की सेना कबायली हमले का सामना करने में असफल हो रही थी तब महाराजा ने अपने दीवान महरचंद महाजन को दिल्ली भेजा हुआ था मेहरचंद महाजन जोकि नए-नए दीवान बनाए गए थे, महाजन से पहले रियासत के दीवान (प्रधानमंत्री) रामचन्द्र काक थे और अगस्त 1947 से अक्तूबर 1947 के मध्य रियासत की राजनीति में भी बहुत बदलाव आ चुके थे जिसके चलते काक को हटा दिया गया "काक का महाराजा पर पूरा प्रभाव था, लेकिन उनके (काक) खिलाफ असंतोष बदता जा रहा था और महाराजा को भी शायद उन पर पूरा भरोसा नहीं रह गया था सो उन्हे हटा दिया गया। कुछ दिनों दीवान के पद पर जनक सिंह नाम के एक सैनिक अधिकारी रहे और फिर अक्तूबर 1947 में मेहरचंद महाजन को दीवान नियुक्त किया गया"।[32] जम्मू व कश्मीर पर कबायली हमले के समय भारत सरकार से सैनिक सहायता प्राप्त करने के लिए दिल्ली में महाराजा हरि सिंह की तरफ से आग्रह लेकर गए थे उन्होने भारत सरकार से हवाई जहाज़ से तुरंत सेना भेजना की मांग की और मेहरचंद महाजन ने काफी आग्रह भी किया और साथ ही महाजन ने "कहा कि सेना भेजिये और कश्मीर को भारत में विलय करना स्वीकार कीजिये और लोकप्रिय पार्टी को जो अधिकार देना चाहे दीजिये, वरना मैं जिन्ना के पास जाता हूँ और उनके पास संधि कि शर्ते रखता हूँ क्योंकि श्रीनगर को बचना है"[33] तब भारत के प्रधानमंत्री नेहरू को उनपर गुस्सा भी आ गया था फिर शेख अब्दुल्लाह कि सहमति से बात स्थिर हो गई इसके बाद भारत के प्रधानमंत्री ने तत्कालीन गवर्नर जर्नरल माउंटबेटन से विलय कि बात कही परंतु माउण्टबेटन विभाजन होने के पहले से ही

---

[32] राजकिशोर. (2000). कश्मीर का भविष्य. पृ. 15.

[33] वही 19.

रियासतों के शासकों और कश्मीर के महाराजा को भी मन बना के किसी एक डॉमिनियन (भारत या पाकिस्तान) में विलय कर लेने की सलाह दे रहे थे साथ ही किसी भी तरह की सहायता से पहले विलय कि आवश्यकता के विषय में भी बता रहे थे "Mountbatten tried to persuade the maharaja of Kashmir to make up his mind and take a decision as regard accession to India or to Pakistan. we may also recollect that Mountbatten was the one who suggested the necessity of accession as precondition to military assistance to the kashmir ruler".[34] और माउण्टबेटन ने सैनिक सहायता के लिए कश्मीर के भारत के साथ विलय पत्र पर हस्ताक्षर मांगे और जब कश्मीर (जम्मू व कश्मीर) के महाराजा को यह खबर मिली कि भारत, जम्मू व कश्मीर के भारत के साथ विलेय किए बिना सैन्य सहायता प्रदान नहीं कर सकता तब वी॰ पी॰ मेनन भी श्रीनगर पहुँच चुके थे और स्थिति कि वास्तविकता एवं नाजुकता को देखते हुए "26 अक्तूबर 1947 को महाराजा ने विलय के संधिपत्र पर हस्ताक्षर कर दिए"[35]। "27 अक्तूबर को लॉर्ड माउण्टबेटन ने महाराजा हरि सिंह को लिखा, "विशेष परिस्थितियों में मेरी सरकार ने कश्मीर रियासत के भारत डॉमिनियन में शामिल होने के निर्णय को स्वीकार करने का निश्चय किया है। यदि किसी रियासत के शामिल होने का प्रश्न विवाद का विषय हो, तो उस राज्य की जनता की इच्छा के अनुसार निर्णय किया जाना चाहिए। इसलिए मेरी सरकार की इच्छा है कि जैसे ही कश्मीर में कानून और व्यवस्था फिर से स्थापित हो जाए और आक्रमणकारी भगा दिए जाएँ, राज्य को डॉमिनियन में शामिल होने का प्रश्न जनमत द्वारा तय किया जाना चाहिए। आपकी अपील को मानकर आपके प्रदेश की रक्षा करने के लिए आपकी फौज कि मद्द करने के लिए भारतीय सैनिक भेजे जा रहे हैं। मेरी सरकार को और मुझे इस बात से संतोष है कि आपने शेख अब्दुल्लाह को अपने दीवान के

---

[34] Blinkenberg, Lars. (1998). India-Pakistan. The History of Unsolved Conflicts. Volume II p. 50.
[35] गुप्त, विजय. (2008). खोया हुआ कश्मीर इतिहास के दर्पण में. पृ 144.

साथ काम करने के लिए अंतरिम सरकार बनाने को आमंत्रित किया है"[36]। और इसके बाद भारतीय सेना ने कबायलियों से जमकर लोहा लिया और उन्हे पीछे खदेड़ दिया। इस प्रकार भारत और पाकिस्तान के मध्य जम्मू व कश्मीर को लेकर पहला युद्ध हुआ और आगे चलकर कश्मीर समस्या के रूप में भारत एवं पाकिस्तान के बीच एक गम्भीर समस्या के रूप में स्थापित होता चला गया जो आज भी जैसे-की -तैसे ही बनी हुई है। इस समस्या के समय भारत के प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू स्वतंत्र रूप से इस समस्या पर कोई स्वतंत्र निर्णय नहीं ले रहे थे, उनके निर्णय राजनीतिक नेताओं (सरदार पटेल, मौलाना आज़ाद, राजगोपालाचारी, कृपलानी आदि) एवं भारत के पहले गवर्नर जनरल के परामर्श एवं सुझाव पर निर्णय ले रहे थे और गवर्नर जनरल माउण्टबेटन कदापि नहीं चाहते थे कि पाकिस्तान को ऐसा लगे कि कश्मीर के विलय के पीछे माउण्टबेटन का ही मुख्य सुझाव था क्योंकि माउण्टबेटन बिलकुल नहीं चाहते थे कि पाकिस्तान को पता चले कि कश्मीर को लेकर दिल्ली की सरकार को मुख्य सुझाव उन्हीं के द्वारा दिए गए हैं क्योंकि वह समझते थे कि पाकिस्तान को यह पता चलना द्वि-राष्ट्र के सिद्धांत के लिए कठिनाई उत्पन्न करने वाला बन जाता ऐसा वह समझ रहे थे "Mountbatten pieces of advice to the delhi government as regard kashmir - if Pakistan knew that he was behind them – surely did not make his role vis-a-vis the new nation theory any easier."[37] परंतु ऐसा भी नहीं है कि माउंटबेटन केवल सुझाव दे रहे थे या अपनी जिम्मेवारी जानबूज कर ठीक से नहीं निभा रहे थे बल्कि एक गवर्नर जनरल होने के नाते वह भारत के प्रति आपने कर्तव्य को भी समझ रहे थे और भारत के द्वारा कश्मीर मसले पर सही कदम उठाने के लिए प्रयास कर रहे थे और इसी क्रम में ही कश्मीर मसले को संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद तक ले जाने का सुझाव भी लॉर्ड माउण्टबेटन का ही था जिसे प्रधानमंत्री नेहरू ने अमल में लाया और प्रधानमंत्री नेहरू इस मसले को 1 जनवरी 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ में ले

---

[36] राजकिशोर. (2000). कश्मीर का भविष्य. पृ. 19-20.

[37] Blinkenberg, Lars. (1998). India-Pakistan. The History of Unsolved Conflicts. Volume II p. 50.

गए। "when, at the end of 1947, Mountbatten suggested a reference of the kashmir question to the united nations"[38] और जब कश्मीर विवाद संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद में चला गया तब संयुक्त राष्ट्र संघ ने इस मसले पर अपनी मध्यस्थता बनाने की कोशिश शुरू कर दी जिसके क्रम में 1 जनवरी 1949 को संयुक्त राष्ट्र संघ ने जम्मू व कश्मीर में संघर्ष विराम की घोषणा कर दी और दोनों देशों की सेनाएँ यहाँ थी वहीं रह गई और जिस क्षेत्र में जिस देश की सेनाएँ थी उस क्षेत्र को नियंत्रण क्षेत्र या नियंत्रण रेखा मान लिया गया और जम्मू व कश्मीर का एक बहुत बड़ा भाग पाकिस्तान ने बलात हथिया लिया था और उस क्षेत्र को अब पाकिस्तान द्वारा 'आज़ाद कश्मीर' का नाम दिया गया और भारत ने इसे 'पाक अधिकृत जम्मू व कश्मीर' नाम दिया इसी तरह भारत के जम्मू व कश्मीर के क्षेत्र को पाकिस्तान ने 'ग़ुलाम कश्मीर' की संज्ञा दी और इस संज्ञा का भी कश्मीर विवाद पर काफी विवाद पड़ता है क्योंकि किसी को ग़ुलाम की संज्ञा देना कहीं-न-कहीं उसे उकसाने का तात्पर्य ही होता है।

अतः भारतवर्ष के विभाजन के कारण कई समस्याएँ उत्पन्न हुई थी जिसने हिंसा,भूखमरी, गरीबी और युद्ध तक की व्यापक समस्या विभाजन के कारण ही उत्पन्न हुई क्योंकि इन सबकी जड़ अधिकार क्षेत्र की लड़ाई थी और इसी समस्या ने एक विराट रूप धारण कर लिया जोकि भारत-पाकिस्तान के मध्य 1947 के युद्ध का मुख्य कारण भी बना और वह था कश्मीर का विवाद। कश्मीर विवाद 1947 में सामने आया जिसके कारण भारत एवं पाकिस्तान युद्ध में आमने सामने आ गए और इसके बाद यह मसला जब आपसे सुलाह से नहीं सुलझा तब भारत द्वारा यह मसला संयुक्त राष्ट्र संघ में भेज दिया गया जिसके बाद नियंत्रण रेखा के विवाद के रूप में यह मसला आज भी अनसुलझा ही है और वर्तमान समय में यह विवाद एक धीमी गति के युद्ध का रूप लेता जा रहा है और 'कश्मीर समस्या' या 'कश्मीर विवाद'की उत्पत्ति

[38] Blinkenberg, Lars. (1998). India-Pakistan. The History of Unsolved Conflicts. Volume II p. 49.

होने और आज तक कोई उचित समाधान न हो सकने की वजह से भी भारत-पाकिस्तान के मध्य मधुर संबंध स्थापित नहीं हो सके और दोनों राष्ट्रों के बीच हमेशा तनाव की स्थिति बनी रहती है।

उपसंहार :

जम्मू व कश्मीर की समस्या विश्व पटल पर भारत के विभाजन के तुरंत बाद सामने आई थी जिसका कारण पाकिस्तान द्वारा जम्मू व कश्मीर पर क़बायली हमला होना था। कबायली हमले के दौरान जम्मू व कश्मीर के महाराजा ने रियासत का भारत के साथ विलय कर लिया था। जिसे पाकिस्तान ने अधूरा विभाजन कहकर आज तक नहीं माना है, लेकिन यहाँ एक बात ध्यान देने योग्य है कि पाकिस्तान के पहले गवर्नर जनरल मुहम्मद अली जिन्ना का कहना था कि किसी भी रियासत का राजा यां निजाम अपनी इच्छा से किसी भी डॉमिनियन में शामिल हो सकता है लेकिन कश्मीर के संदर्भ में पाकिस्तान का विचार बदल क्यों गया ? पाकिस्तान विभाजन को आज तक अधूरा विभाजन मानता है। पाकिस्तान का मानना है कि पाकिस्तान के साथ कश्मीर का विलय हुए बिना पाकिस्तान अधूरा है। कश्मीर को लेकर भारत के साथ पाकिस्तान का संघर्ष 1947 से चल रहा है जोकि आज भी विद्यमान है। आज समस्या तो वही है लेकिन उसका रूप बदल गया है, आज के समय में संघर्ष, युद्ध के अलावा एक अन्य रूप में यानि; सीजफायर के उल्लंघन के रूप में उत्पन्न हुआ है। सीमा क्षेत्र में सीजफायर के उल्लंघन से स्थानीय शांति की चुनौतियां बहुत अधिक बढ़ गई हैं और इससे स्थानीय जीवन भी पूरी तरह से प्रभावित हुआ है। सीमा क्षेत्र में पूर्व के कुछ वर्षों से सीजफायर के उल्लंघन की घटनाओं में बड़ी तेज़ी से वृद्धि हुई है, जिससे कि धीरे-धीरे सीजफायर का उल्लंघन एक गंभीर समस्या का रूप लेता जा रहा है। उक्त समस्या सीजफायर के उल्लंघन से हटकर एक धीमी गति वाले युद्ध का रूप लेता जा रहा है, अथवा जिसे अघोषित युद्ध भी कहा जा सकता है। वर्ष 2014 में हुई सीजफायर की घटनाओं को बिलकुल नज़रंदाज़ नहीं किया जा सकता है। वर्ष 2014 में 583 बार सीजफायर के उल्लंघन की घटनाएँ देखी गई, जिसमें भारतीय सैनिकों के साथ-साथ सीमा क्षेत्र के लोगों की जानें गई व उनकी संपत्ति की भी हानि हुई। स्थानीय लोगों को (सीमावर्ती लोग) समय-समय पर विस्थापित भी होना पड़ा, जिससे वह लोग अपने घरों व पशुओं को छोड़ कर राहत शिविरों में रहने के लिए मजबूर हो गए। पाकिस्तान द्वारा उनके गावों पर 81mm एवं 82mm के मोर्टार बम फेंके गए, जिसकी मारक

क्षमता 7 किलोमीटर तक थी। इसके साथ-साथ पाकिस्तान द्वारा स्वचालित हथियारों से गोलियां भी चलाई गई जिनका मुख्य निशाना सीमा क्षेत्र में बसने वाले स्थानीय लोग थे। उक्त सभी स्थितियों को देखें तो वर्ष 2014 के सीजफायर के उल्लंघन को केवल सीजफायर के उल्लंघन का नाम नहीं दिया जा सकता बल्कि यह एक प्रकार का भारत के खिलाफ **"धीमी गति का अघोषित युद्ध"** था जिसके कई लक्ष्य देखे जा सकते हैं :

1) स्थानीय शांति एवं जीवन के लिए चुनौतियाँ उत्पन्न करना।

2) घुसपैठ को अंजाम देने व जम्मू क्षेत्र में आतंक फैलाना।

3) जम्मू व कश्मीर में होने वाले चुनावों में खलल डालना।

4) भारत की नव-निर्मित केन्द्र सरकार के रवैये को जाँचना।

5) सीजफायर के माध्यम से जम्मू के क्षेत्रों को निशाना बनाकर "कश्मीर-समस्या" के समाधान की बात करना।

सीजफायर के उल्लंघन में आरोप-प्रत्यारोप के माध्यम से भारत को परमाणु बम (छोटी क्षमता वाले परमाणु बम) के इस्तेमाल को लेकर धमकाना, आदि मुख्य बिन्दु हैं। इसके साथ-साथ कई अन्य लक्ष्य भी हो सकते हैं जिसका पता लगाने में शायद भारतीय खुफिया एजेंसियां भी असफल रही होंगी जिनपर शैक्षणिक शोधों से कई अधिक निधि खर्च की जाती है। जम्मू क्षेत्र में बहुत बार सीमा पर सुरंग पाई गई है। जम्मू क्षेत्र पर हालिया वर्षों में बहुत सारी बड़ी-बड़ी आतंकी घटनाएँ भी हो चुकी हैं, जिनमें आतंकियों के मुख्य निशाने पर मुख्य रूप से जम्मू का क्षेत्र रहा और जिसमें आतंकी निशाने पर सांबा का एक आर्मी स्कूल भी है जिसे 14 मई 2002 को जम्मू के कालुचक्क में हुए आतंकी हमला की नज़र से देखा जा सकता है जिसमें 31 लोग मारे गए थे जिनमें ज्यादातर सैनिकों के परिवारों के सदस्य थे। जिनमें 10 छोटे बच्चे भी थे, लेकिन ऐसी आतंकी हमलों की जानकारी भारतीय खुफिया एजेंसियों

को नहीं मिल पा रही है, जोकि भारतीय खुफिया एजेंसियों पर एक सवालिया निशान खड़ा करता है। अगर भविष्य में आतंकी, ऐसी किसी घटना को जम्मू में अंजाम देने में सफल हो जाते हैं तो निश्चय ही उस दिन भारतीय खुफिया एजेंसियों को भारत की जनता को देने योग्य कोई जवाब नहीं होगा। भारतीय खुफिया एजेंसियां आज तक हुए किसी बड़े हमले की जानकारी पहले नहीं लगा पाई हैं जिसका उदाहरण 1999 में कारगिल में पाकिस्तानी घुसपैठ की योजना, 13 दिसम्बर 2001 का संसद हमला और साथ ही 2008 का मुंबई आतंकी हमला एवं कई अन्य घटनाएँ होंगी जो प्रकाश में नहीं आ सकीं लेकिन कहीं-न-कहीं पर घटित हुईं जोकि देश की सुरक्षा एवं शांति के लिए महत्वपूर्ण है और जिनकी जानकारी गृह मंत्रालय किसी को नहीं दे सकता लेकिन यह सब बिन्दु ध्यान देने योग्य हैं, और इन्ही से किसी क्षेत्र विशेष की शांति एवं देश की शांति भी जुड़ी हुई है जिसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। सरकार का यहाँ देश की सुरक्षा व शांति के क्षेत्र में उदासीन रवैया देखा जा सकता है।

वर्ष 2014 में पाकिस्तान की तरफ से किया गया सीजफायर का उल्लंघन जिसकी संधि वर्ष 2003 में की गई थी, जिसके बाद के कुछ वर्षों तक भारत-पाकिस्तान सीमा पर शांति रही लेकिन वर्ष 2014 के बाद स्थिति धीरे-धीरे हालात बदलने लगे और वर्ष 2014 में हुए सीजफायर उल्लंघन की घटनाएँ विश्व पटल पर सबके सामने हैं। भारत एवं पाकिस्तान के मध्य वर्ष 2014 में हुए सीजफायर के उल्लंघन की घटनाओं में तेज़ी होने पर उसे रोकने एवं शांति स्थापना करने और शांति वार्ता के लिए भारत द्वारा प्रयास भी किया गया था। जिसमें पाकिस्तान द्वारा वार्ता में अलगाववादियों से वार्ता को महत्व दिया गया जिसे भारत ने पाकिस्तान की कूटनीतिक चाल समझकर उस वार्ता को रद्द कर दिया और इसमें भी सीजफायर के उल्लंघन के समय सरकार का केवल उदासीन रवैया देखने को मिला। पाकिस्तान द्वारा कश्मीर के अलगाववादियों से वार्ता करना न कि भारत की सरकार के साथ, जोकि एक कूटनीति या सोची समझी रणनीति का हिस्सा कहा जा सकता है क्योंकि सीजफायर का उल्लंघन जिस क्षेत्र में सर्वाधिक हो रहा है व जिन लोगों के जान-माल का नुकसान हो रहा है जिनमें कठुआ से लेकर पुंछ तक के क्षेत्र के लोग मुख्य रूप से हैं, वह सब जम्मू का क्षेत्र है। जिससे जम्मू क्षेत्र की

पाकिस्तान से लगती हुई अंतरराष्ट्रिय सीमा व नियंत्रण रेखा दोनों हैं। जम्मू क्षेत्र की पाकिस्तान के साथ लगने वाली सीमाएं जिनपर सीजफायर के उल्लंघन, घुसपैठ, सुरंग मिलना, आतंकी हमले आदि घटनाएँ मुख्य बिन्दु हैं, लेकिन पाकिस्तान वार्ता अलगाववादियों से करना चाहता है यह बात ध्यान देने योग्य है जम्मू क्षेत्र को निशाना बनाकर पाकिस्तान, भारत को घुमराह करके 'कश्मीर-समस्या' पर मंथन करना चाहता है। पाकिस्तान अपनी कूटनीति के तहत भारतीय नेताओं की ब्यानबाजी को भी वार्ता में रोड़ा बनाने एवं शांति को भंग करने का माध्यम बनाकर विश्व पटल पर धीमी गति के छोटी क्षमता वाले परमाणु युद्ध की चुनौतियाँ भविष्य में भारत के सामने रख सकता है क्योंकि भारत यह जनता है कि परमाणु हथियारों को लेकर पाकिस्तान की 'नो फ़र्स्ट यूज' की नीति केवल उन देशों के लिए है जिनके पास परमाणु शक्ति नहीं है, लेकिन भारत के विरुद्ध वह परमाणु बम यां छोटी क्षमता वाले अणु बम तैयार कर प्रयोग कर सकता है ओर भविष्य में ऐसा होने की संभावना भी होगी।

पाकिस्तान द्वारा जम्मू के सीमा क्षेत्र पर सीजफायर के उल्लंघन से उत्पन्न समस्याओं के भविष्य में गंभीर परिणाम निकल सकते हैं, जिसे भारत की सरकार कहीं-न-कहीं अच्छी तरह से समझती है लेकिन सरकार का उदासीन रवैया विध्यमान है। वर्ष 2014 में हुए सीजफायर के उल्लंघन के समय भी सरकार का उदासीन रवैया ही देखने को मिला क्योंकि सरकार ने सीजफायर के उल्लंघन का जवाब कितना दिया, कैसे दिया और किस प्रकार दिया यह जनता को नहीं पता है लेकिन सरकार द्वारा कोई उचित प्रयास किए जाते तो शायद सीजफायर का उल्लंघन इतनी ज्यादा मात्रा में नहीं होता। सरकार द्वारा स्थानीय प्रभावित लोगों के लिए उपलब्द कराई गई व्यवस्थाएं इतनी अच्छी नहीं रही जिससे स्थानीय लोगों को काफी दिक्कतों का सामना करना पड़ा, बच्चों की पढ़ाई प्रभावित हुई, बच्चों एवं महिलाओं के स्वस्थ्य संबंधी समस्याएँ बढ़ी। साथ ही लोगों के रोज़मर्रा की जरूरतों की कमी से उत्पन्न समस्याएँ, रोजगार पर प्रभाव पड़ना आदि मुख्य समस्याओं का सामना स्थानीय लोगों को करना पड़ा। जिससे स्थानीय जनता में रोष उत्पन्न हुआ जिससे कि कहीं-न-कहीं स्थानीय शांति के लिए भी चुनौतियाँ उत्पन्न हो गई और साथ ही जो लोग राहत शिविरों में नहीं गए उनमें बहुत से लोग

घायल हुए और कई लोगों की जानें भी गई और साथ ही लोगों के पशु भी घायल हुए एवं बहुत से पशु फायरिंग में मारे गए जोकि ग्रामीणों के लिए रोज़ी-रोटी का भी एक साधन होते हैं जिससे की सीमावर्ती लोगों की आमदनी का साधन भी जाता रहा जिससे भी समाज में असंतोष की स्थिति उत्पन्न होती रही व जनजीवन प्रभावित होता रहा।

यहाँ ध्यान देने योग्य एक बात यह भी है कि भारत एवं पाकिस्तान के मध्य शांति स्थापना का प्रभाव पूरे एशिया पर पड़ेगा ओर समूचे एशिया में शांति बनी रहे इसके लिए भारत एवं पाकिस्तान को कोई एक बीच का रास्ता खोजना चाहिए जिसमें कि कोई सीजफायर के उल्लंघन को रोकने एवं भविष्य में दोनों राष्ट्रों के मध्य किसी प्रकार के धीमी गति के युद्ध की स्थिति न बने जिससे की दोनों राष्ट्रों की स्थानीय जनता जोकि सीमावर्ती क्षेत्रों में रहती है जिसका सीजफायर के उल्लंघन से बहुत नुकसान होता है और जिससे स्थानीय शांति के लिए चुनौतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं और दोनों तरफ का स्थानीय जीवन भी प्रभावित होता है। भविष्य में अगर कोई उचित संधि यां सहमति दोनों राष्ट्रों के मध्य नहीं होती है तो भविष्य में एक और युद्ध की पृष्ठ भूमि भारत एवं पाकिस्तान के मध्य तैयार हो जाएगी जिसका भारतीय क्षेत्र में मुख्य केंद्र कठुआ से पुंछ तक का क्षेत्र होगा और पाकिस्तान की तरफ भी इसी क्षेत्र से लगती सीमा का क्षेत्र होगा और भविष्य में अगर सीजफायर की स्थिति यूँ ही बनी रही तो सांबा, आर.एस.पुरा, जम्मू के क्षेत्रों में बड़ी आतंकी घटनाएँ भी होती रहेंगी जिससे भी स्थानीय शांति के लिए चुनौतियाँ बनी रहेंगी। पूर्ण रूप से अगर देखा जाए तो सीजफायर का उल्लंघन एक प्रकार की बहुत ही जटिल समस्या है और यह केवल सीमा पर गोली चलने तक ही सीमित नहीं रही है बल्कि वर्ष 2014 में यह एक 'धीमी गति के युद्ध' के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत हुई जिसे हम एक अप्रत्यक्ष एवं अघोषित युद्ध भी कहा सकते हैं जो की कब शुरू हुआ और कब समाप्त हुआ यां कब समाप्त होगा यह कोई निश्चित रूप से बता नहीं सकता और अगर भविष्य में भी वर्ष 2014 की भांति सीजफायर के उल्लंघन की घटना होती है तो निश्चय ही वह वर्ष 2014 से कहीं अधिक आक्रामक होगी और गोलीबारी का क्षेत्र भी व्यापक होगा और अगर दोनों राष्ट्रों द्वारा उस समय तक कोई भी

शांति की संधि यां मित्रता की संधि (Peace Agreement or Friendship Treaty)नहीं की गई तो निश्चय ही वह घड़ी युद्ध की होगी और इसका पुरा प्रभाव पूरे एशिया की शांति पर पड़ेगा और पूरे विश्व का जनजीवन भी प्रभावित रहेगा।

शोध सीमा :

प्रस्तुत शोध "सीमा क्षेत्र में सीज़फायर उल्लंघन और स्थानीय शांति की चुनौतियाँ" ('जम्मू क्षेत्र में पाकिस्तान की फायरिंग') वर्ष 2014 में हुई सीज़फायर की घटनाओं और जम्मू क्षेत्र की शांति पर प्रभाव के विशेष सदर्भ पर आधारित है। प्रस्तुत शोध जम्मू क्षेत्र में हुए सीजफायर के उल्लंघन पर आधारित है। जम्मू व कश्मीर के जम्मू क्षेत्र में कठुआ से लेकर पुंछ तक का पाकिस्तानी सीमा से लगता क्षेत्र आता है जोकि जम्मू संभाग का क्षेत्र है और जिसे जम्मू क्षेत्र भी कहा जा सकता है। प्रस्तुत शोध में प्रयुक्त शब्द 'सीजफायर' एक अँग्रेजी शब्द है जिसका अर्थ होता है गोली को रोकन, युद्ध-विराम, संघर्ष विराम आदि और सीजफायर का उल्लंघन एक आसान शब्द है और आम तौर पर लोगों द्वारा अधिक बोला जाता है अर्थात बोलचाल में अधिक प्रचालन में है क्यूंकी युद्ध-विराम का उल्लंघन एक बड़ा शब्द जिसे याद रखना यां बोलना कठिन है। युद्ध-विराम की तुलना में सीजफायर का शब्द आम लोगों में अधिक बोला व समझा जाता है, इसलिए शोध में सीजफायर का उल्लंघन शब्द का प्रयोग किया गया है। इसी वर्ष को ध्यान में रखकर शोध से संबन्धित आंकड़े लिए गए है। प्रस्तुत शोध जम्मू क्षेत्र के कुछ ग्रामों को ध्यान में रखकर किया जाएगा जिसमें क्षेत्र भ्रमण के पश्चात प्रतिदर्शन (Sampling) किया गया है।

सुझाव :

- ❖ भारत एवं पाकिस्तान को सीजफायर की संधि को नये सिरे से शुरू करना चाहिए।
- ❖ दोनों राष्ट्रों को शांति स्थापना के लिए प्रयास करते हुए कोई शांति की संधि यां मित्रता की संधि (Peace Agreement or Friendship Treaty) के लिए विचार एवं प्रयास करना चाहिए।
- ❖ भारत एवं पाकिस्तान को सीमा-पार से होने वाली आतंकी घुसपैठ को रोकने एवं आतंकी प्रशिक्षण कैंपो की समाप्ती के लिए एकजुट होकर प्रयास करना चाहिए ताकि आतंकवाद पर नकेल कसी जा सके।
- ❖ भारत एवं पाकिस्तान को परस्पर परमाणु हथियारों के प्रयोग न करने की संधि करनी चाहिए।
- ❖ भारत एवं पाकिस्तान की सरकारों को सीमा पर उत्पन्न होने वाले संघर्ष की समाप्ती के लिए तत्कालीन वार्ताएं करनी चाहिए जोकि दोनों सरकारों के मध्य हों, न कि किसी भी अलगाववादी नेताओं के साथ वार्ता उचित स्थिति होने पर ही कि जाए ताकि दोनों राष्ट्रों के मध्य शांति वार्ता की कढ़ी रूक न जाए।
- ❖ एक अन्य सुझाव जोकि किसी राष्ट्र के राष्ट्रवादी कभी नहीं मानेंगे और शायद भारत यां पाकिस्तान की सरकार भी कभी नहीं मानेगी लेकिन यह सुझाव बहुत अहम है और भविष्य में भी प्रासंगिक रहेगा वह यह है कि दोनों राष्ट्रों कि उन सभी मुख्य सीमा चौकियों की चौकसी संयुक्त राष्ट्र संघ को सौंप दी जाए जिन सीमा चौकियों पर सीजफायर के उल्लंघन की घटनाएँ अधिक होती हैं और यहाँ से आतंकी घुसपैठ यां सुरंग आदि पाई जाती है उन दोनों देशों की सीमा चौकियों को संयुक्त राष्ट्र संघ की निगरानी में रख देना चाहिए जिसमें संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा इन दोनों राष्ट्रों की सीमाओं पर यूरोपीय एवं अमरीकी कर्मचारी नियुक्त किए जाएँ जिससे कि दोनों तरफ से निष्पक्ष निगरानी भी होगी और सीजफायर के उल्लंघन , घुसपैठ की घटनाएँ

धीरे-धीरे समाप्त हो जाएंगी और यह शांति स्थापना के क्षेत्र में पूरे विश्व पटल पर एक अनोखी पहल होगी जिसकी महत्ता को धीरे-धीरे उन सभी विवादित राष्ट्रों के लिए भी उपयोगी मिसाल सिद्ध होगी जहां पर सीमा विवाद के कारण युद्ध की स्थिति बनी रहती है, वह राष्ट्र भी अपने संघर्ष के समाधान में इस युक्ति से लाभ उठा सकेंगे जिसकी उत्पत्ति का श्रेय भारत एवं पाकिस्तान को जाएगा जिससे की पूरे विश्व पटल पर शांति की स्थापना के क्षेत्र में एक व्यापक प्रयास होगा लेकिन यह सुझाव शायद दोनों राष्ट्रों को हास्यास्पद लगे लेकिन अगर इस सुझाव की व्यावहारिकता पर गंभीरता से विचार किया जाए तो भारत एवं पाकिस्तान के मध्य सीमा विवाद, सीजफायर के उल्लंघन (संघर्ष विराम के उल्लंघन) की समस्या को हमेशा व सदैव के लिए समाप्त किया जा सकता है लेकिन दोनों राष्ट्र अपने देश की सीमा की चौकसी किसी अन्य पक्ष को कभी देने में राज़ी नहीं होगा क्योंकि इसमें उक्त राष्ट्र अपने पूरे देश की सुरक्षा को खतरे में डालने का तर्क देकर इस सुझाव को नकार सकता है लेकिन किसी-किसी सीमा चौकी पर संयुक्त राष्ट्र संघ की टुकड़ी को तैनात कर एक परीक्षण किया जा सकता है जोकि निश्चय ही सफल रहेगा।

अत: भारत एवं पाकिस्तान के मध्य 2010 के बाद से जम्मू व कश्मीर की सीमा पर सीजफायर के उल्लंघन की घटनाओं में बहुत वृद्धि होती गई, जिसमें वर्ष 2014 में सीजफायर के उल्लंघन की घटनाएँ सर्वाधिक हुई जिसमें स्थानीय शांति के लिए चुनौतियाँ उत्पन्न हुई और भविष्य के लिए भी यह एक जटिल समस्या है।

----------****----------